International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 15-03-2019; Accepted: 19-04-2019
www.hindijournal.com
Volume 5; Issue 3; May 2019; Page No. 23-24

बदलते परिवेश में दलितों का सामाजिक और साहित्यिक मंथन

अभिलाष कुमार पासवान

इंदिरा गाँधी राष्ट्रिय मुक्त विश्वविद्यालय क्षेत्रीय केंद्र, हैदराबाद, अध्ययन केंद्र- अरोड़ा डिग्री कॉलेज, हैदराबाद तेलंगाना, भारत।

सारांश
दलितों को लेकर हमारी राजनीति हमेशा ही गर्म रहती है। मगर उनके जीवन स्तर में कितना बदलाव आया है, ये प्रश्न खुद में एक प्रश्न बन कर रह गया है। आज भी दलित वर्ग का एक भाग शोषित ही है। वक्त बदला, लोग साक्षर हुए, मगर मानसिकता में कोई खास परिवर्तन नहीं हुए हैं। समाज का रवैया आज भी दलितों के प्रति बदला नहीं है। आज भी उन्हें छुआछूत का शिकार होना पड़ रहा है। आज भी कई जगह मंदिरों में उनका प्रवेश वर्जित है। कहने को तो हमारा देश बदल रहा है, साक्षरता दर बढ़ रही है, लेकिन हम ये कब समझेंगे कि वो भी हमारे समाज का भाग है जिनके बिना हम अधूरे हैं। हमारी विचारधारा कब बदलेगी। हम इंसान को इंसान के रूप में कब देखना शुरू करेंगे, कब तक जाति, धर्म का प्रपंच चलता रहेगा। चाहे आरक्षण हो, या सरकारी अधिनियम, आज तक कोई भी सरकार, कोई भी कानून इन दलितों का पूर्ण अधिकार जो संविधान में लिखित है पूर्ण नहीं कर पाया है। सवाल यह है आखिर कब तक ऐसा चलता रहेगा। ऐसा नहीं है कि कुछ बदला नहीं है, मगर रफ़्तार बहुत धीमी है। प्रस्तुत अंश में दलितों को सामाजिक और साहित्यिक दृष्टि से देखने की कोशिश की गयी है।

मूल शब्द: दलित, दलित साहित्य, निम्न वर्ग ।

1. प्रस्तावना
समकालीन भारत में आज भी आबादी का एक बड़ा तबका बुनियादी सुविधाओं से वंचित है मगर हर चुनाव का मुद्दा जरूर बनता है, जिसे हम कभी गरीब, कभी दलित, तो कभी पिछड़ा वर्ग तो कभी कुछ और कहते हैं। आजाद भारत के 72 साल बाद भी उनकी समाजिक स्थिति में कोई बड़ा बदलाव नहीं आया है। आज भी दलित आजाद भारत का एक शोषित वर्ग ही है और आज भी उनका शोषण जारी है। वर्तमान समय में भी दलित कमोबेश मीडिया के सुर्खियों का अभिन्न अंग है। समयानुसार दलितों की अलग-अलग परिभाषा परिलक्षित की गयी है। रामचंद्र वर्मा के हिंदी मानक कोश के अनुसार दलित समाज का निम्नतम वर्ग है जो उच्च वर्ग के लोगों के द्वारा सताया गया है और जिनकी आर्थिक स्थिति बेहद ख़राब है। किसी भी काल में चाहे राजनैतिक व्यवस्था या सामाजिक स्थिति जैसी भी हो , निम्न वर्ग ही दलित कहलाया है, और इस वर्ग की आर्थिक स्थिति सदा ही बेहद नाजुक रही है । इसलिए दलित की जब भी, कहीं भी कोई चर्चा होती है तो इसमें किसान , मजदूर , दास , आदि जैसे वर्गों का ही जिक्र होता है। आजाद भारत के पहले और बाद में भी, समाज में दलित शब्द और दलित वर्ग मौजूद है। स्वतंत्रतापूर्व और स्वतंत्रोत्तर काल की कविता, कहानी या किसी भी प्रकार के गद्य में इसका वर्णन मिलता रहता है।

आजादी से पहले, समाज के कुछ निचले वर्गों को अछूत माना जाता था। इन अछूतों को महात्मा गाँधी ने हरिजन का नाम दिया। भारत सरकार अधिनियम 1935 , जिसे हरिजन एक्ट 1935 के के नाम से भी जाना जाता है , जब लागू हुआ तो समाज के इस दबे कुचले वर्ग को एक छत के नीचे लाने की कोशिश की गयी जिसे सर्वप्रथम अनुसूचित जाति का नाम दिया गया। फिर समयानुसार समाज के ये निचले वर्ग अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन-जाति, पिछड़ा वर्ग , अत्यंत पिछड़ा वर्ग में बँटते चले गए। आगे चलकर इन्हीं हरिजनों को बाबासाहेब डॉ. भीम राव अंबेडकर ने दलित कहा है और भारतीय संविधान में इनके लिए आरक्षण की व्यवस्था कर इन्हें मुख्य धारा का अंग बनाने की वकालत की है। मगर आजाद भारत के राजनैतिक गणित ने इस तबके को केवल वोट बैंक बना कर रख दिया और डॉ. अंबेडकर के ख्वाब को ख्वाब ही बना रहने दिया। समय के बदलते परिवेश में हरिजन तो दलित बन गया, मगर जाति व्यवस्था में कोई खास बदलाव नहीं आया है। आज भी ऊँची जाति के लोग छोटी जाति के लोगों को निम्न और तुच्छ ही मानते हैं। आज भी भारत के कई गाँव इस जाति प्रपंच में लिपटे हुए हैं।

मुख्यत: यह जाति प्रथा कल भी और आज भी हिन्दू धर्म में ज्यादा देखने को मिलता है। स्वतंत्रता से पूर्व "जात -पात तोड़क मंडल" नामक एक समिति गठन की गयी गयी थी जिनका मुख्य उद्देश्य जाति व्यवस्था को ख़त्म कर हिन्दू जनजागरण कर सामाजिक बदलाव लाना था। मगर राजनीतीकरण के कारण ये न उस वक्त संभव हो पाया , न ही आज कोई इसकी जहमत कर सकता है। आज भी बदलते वक्त और साल संग ये नदारद है और उम्मीद है अगले कुछ वर्षों तक ऐसी ही स्थिति रहेगी जब तक ये वोट बैंक बने रहेंगे।

2. सामाजिक स्तिथि
दलितों को पहले जहाँ अछूत कहकर बुलाया जाता था, वहीं आज के सरकारी आँकड़ों में उन्हें अनुसूचित जातियाँ कहा जाता है। यह भारत की कुल आबादी का तकरीबन 16.6 प्रतिशत है। आबादी के लिहाज से यह एक बड़ा वोट बैंक है और हर चुनाव में यह नानाप्रकार की पार्टियों के बीच का फुटबॉल बना रहता है। यह आबादी आज भी अपने हक के लिए आंदोलन लड़ रही है।आजादी के बाद इस वर्ग को ऊपर उठाने और इनके हितों की रक्षा के लिए संविधान में आरक्षण और कानूनी संरक्षण की व्यवस्था की गयी थी मगर उनको अमल में लाना आज भी आधा अधूरा ही है। इनके लिए अनुसूचित जाति आदेश 1950 भी पारित किया तो गया, मगर अब तक ये कहीं न कहीं वहीं खड़ा दिखता सा प्रतीत होता है। जब यह आदेश पारित हुआ तो समाज के निचले तबके के 1108 जातियों के नाम इनमें शामिल किये गए , मगर चुनावी फायदे के लिए आज तक इनमें छेड़छाड़ जारी है। चुनाव आयोग के अनुसार (लोकसभा चुनाव 2014), 543 संसदीय निर्वाचन क्षेत्रों में 84 सीटें अनुसूचित जाती तो 47 सीटें अनुसूचित जन-जाती के लिए आरक्षित थीं। सरकार का यह ध्यान जरूर रहा है कि इनके जीवन स्तर में बदलाव हो , वो अपनी बात रख सके , लिहाजा सीटें भी आरक्षित कर दी गई , मगर परिवर्तन संतोषजनक नहीं है।

3. दलित शिक्षा और दलित साहित्य
ऐसा नहीं है कि दलितों के स्थिति में कोई सुधार नहीं हुई है, मगर उनका स्थान आज भी शोध का विषय बना हुआ है। समाज के बदलते परिवेश में शिक्षा का आगमन भी इन दलितों के आँगन में हुआ और फलस्वरूप काबिल नौकरशाह से लेकर देश के पहले व्यक्ति बनने का गौरव भी दलित को प्राप्त हुआ है। और के. आर. नारायणन के रूप में देश को पहला दलित राष्ट्रपति मिला। जैसे जैसे शिक्षा का प्रसार दलितों में होने लगा , वैसे वैसे इस तबके की बुद्धि भी प्रखर होने लगी। नतीजा यह है कि विकास के हर क्षेत्र में दलितों के योगदान से कोई मुकर नहीं सकता। दलित समुदाय ने जहाँ अच्छे दार्शनिक, लेखक, कवि दिए हैं, वहीं कटु आलोचक भी दिए हैं। मगर आज भी दलित साहित्य को लेकर कोई एक मत नहीं बन पाया है।

दलितों का वर्णन प्रेमचंद की कहानियों , उपन्यासों जैसे कि पूस की रात , गोदान , आदि में भी हुआ है , फणीश्वरनाथ रेणु के आँचलिक उपन्यास में भी और बाबा नागार्जुन के हुंकार में भी। मगर इनकी कृतियों को दलित साहित्य की संज्ञा देने में आज भी मतभेद है। दलित चिंतक मानते हैं कि दलितों का साहित्य का निर्माण केवल दलित ही कर सकते हैं। उनका मानना है कि स्वयंभोगी ही आपबीती अच्छे से लिख सकते हैं। इस तबके का मानना है कि दलितों के द्वारा दलितों के ऊपर लिखा गया साहित्य ही दलित साहित्य है। इस प्रकार से अगर दलित साहित्य पर प्रकाश डाला जाए तो कहीं न कहीं यह बंधनों में बँधा है। फिर भी इनके रचनाकरों की कोई कमी नहीं है। धर्मवीर , तुलसी राम , ओमप्रकाश वाल्मीकि , बिहारी लाल हरित , आदि दलित लेखकों को लोगों ने पढ़ा भी और उन्हें सराहा भी। बदलते वक्त संग कई दलित साहित्य संघों का निर्माण हुआ जैसे महाराष्ट्र दलित साहित्य संघ , मुंबई और हिंदी से बाहर भी निकलकर अन्य भाषाओं में दलित साहित्य अपने आधुनिक काल को प्राप्त हुई। आज भी हिंदी दलित साहित्य के अलावा मराठी दलित साहित्य, मलयालम दलित साहित्य , कन्नड़ दलित साहित्य , तेलुगु दलित साहित्य, गुजराती दलित साहित्य, आदि को पढ़ने वाले करोड़ों लोग हैं।

4. निष्कर्ष
भारत के बदलते परिवेश में भी दलितों का कोई खास उत्थान देखने को नहीं मिला है। आज भी आधी से अधिक आबादी समाज से वंचित सी प्रतीत होती है। जितनी भी संवैधानिक उपाय अब तक इस वर्ग के लोगों के लिए किए गए हैं , ज़मीनी स्तर

पर कहीं न कहीं सूखी धरती पर बारिश के चंद बूँदों सी है। आरक्षण ने कुछ हद तक इनकी सामाजिक और आर्थिक उन्नति तो की है मगर वो भी कुछ तबकों के हाथों ही लिपटी हुई सी है। सत्ताधारी और विपक्ष, दोनों पार्टियाँ समयानुसार इस वर्ग का इस्तेमाल करता आया है। जिन्हें इनके जीवन स्तर को समाज के साथ सरोकार करना था , वही वर्षों से इनकी आशाओं का दोहन करते आ रहे हैं। आज भी यह वर्ग बड़ी उम्मीद से चुनावों में वोट करता है , मगर चुनाव उपरांत उपेक्षित सा ही रहता है। आज भी दलितों पर हो रहे अन्याय की सूरत बढ़ती जा रही है। सरकार किसी की भी हो , दलितों का शोषण जारी है। आज भी कई जगहों पर छुआछूत जारी है। कठोर कानून होने के बावजूद इनके अत्याचार में कोई कमी नहीं आयी है। इसके दो प्रमुख कारण है इनकी शिक्षा और इनकी उपजातियों में विभाजन। समग्र शिक्षा की कमी आज भी इन समुदायों के पीछड़ेपन का सबसे बड़ा कारण है। सुशिक्षा आज भी एक मुट्ठी भर लोगों के पास ही है। उपजातियों में इनका बँटना भी इनकी दयनीय स्थिति का कारण है। बँटे होने के कारण कभी भी यह वर्ग खुलकर एक साथ किसी भी सामाजिक अत्याचार का विरोध नहीं कर पाया है। आज के बदलते परिवेश में , इस वैश्वीकरण के युग में यह बहुत जरूरी है कि इनकी शिक्षा और रोजगार पर ज्यादा ध्यान दिया जाए जिससे कि इनकी आर्थिक और सामाजिक स्तिथि में बदलाव आ सके। आज भी यह वर्ग सरकार पर अपनी जरूरतों के लिए काफी निर्भर है। इसलिए सरकार को इस तबके का ध्यान रखते हुए इन्हें आत्मनिर्भर बनाने पर बल देना चाहिए ताकि एक जाति मुक्त समाज का निर्माण हो सके। कल जब हम भारत की बात करें तो , हमारा नया भारत सभी सामाजिक कुरीतियों से मुक्त हो।

5. संदर्भ

1. रामचंद्र वर्मा - हिंदी मानक कोश, खंड-3
2. अछूत कौन और कैसे : डॉ. भीम राव अंबेडकर, 1949.
3. भारत निर्वाचन आयोग (https://eci.gov.in/divisions-of-eci/rajbhasha/)
4. आनंद तेलतुंबडे: बीबीसी न्यूज़ 24 मई 2018 (https://www.bbc.com/hindi/india-44227515)
5. अनीहीलिएशन ऑफ़ कास्ट, डॉ. भीम राव अंबेडकर , 1936
6. कांस्टिट्यूशन (शेड्यूल्ड कास्ट्स) आदेश, 1950, भारत का राजपत्र, अप्रैल 11, 1950.
7. भारत सरकार अधिनियम 1935, (http://www.legislation.gov.uk/ukpga/1935/2/pdfs/ukpga_19350002_en.pdf)